



भारत में जाति आधारित आरक्षण: एक राष्ट्र जो अभी भी अपने उत्तर पर बहस कर रहा है

अविशा रवि

एम.ए, यूजीसी नेट, राजनीति विज्ञान, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली

Article Info: (Received- 24/04/2026, Accept- 26/06/2026, Published- 05/07/2026)

DOI- [10.64127/rnimj.2026v2i30013](https://doi.org/10.64127/rnimj.2026v2i30013)

सार—

स्वतंत्रता के बाद के भारत में जाति आधारित आरक्षण सामाजिक नीति के सबसे स्थायी और विवादित साधनों में से एक है। जाति आधारित बहिष्कार की ऐतिहासिक विरासत पर भारतीय राज्य को किस तरह प्रतिक्रिया देनी चाहिए, यह सवाल संविधान के निर्माण के समय से ही निरंतर विद्वतापूर्ण और राजनीतिक विवाद का विषय रहा है (ऑस्टिन, 1966)। यह पत्र स्वतंत्रता पूर्व काल (छत्रपति शाहू महाराज) से 2019 (ईडब्ल्यूएस आरक्षण) तक आरक्षण नीति के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन करता है। यह बी.आर. अंबेडकर के लेखन और उनके संविधान सभा के भाषण का संदर्भ लेते हुए संवैधानिक बहस को उसके बौद्धिक संदर्भ में प्रस्तुत करता है। इसमें आरक्षण नीति में स्वतंत्रता के बाद के घटनाक्रम भी शामिल हैं। यह पत्र आगे जाति आधारित आरक्षण पर समकालीन बहस की पड़ताल करता है। इसमें आरक्षण नीति के समर्थकों और आलोचकों दोनों पक्षों को शामिल किया गया है। यह पत्र जाति आधारित भेदभाव से निपटने के लिए नीतिगत सिफारिशों का एक सेट प्रस्तावित करते हुए समाप्त होता है।

मुख्य शब्द— जाति आरक्षण, भारतीय संविधान, बी.आर. अंबेडकर, सकारात्मक कार्रवाई (सकारात्मक कार्य) प्रस्तावना—

हर कुछ वर्षों में, यही बहस फिर सामने आती है। एक नया सरकारी आदेश, एक अदालत का फैसला या किसी विरोध का वायरल वीडियो आरक्षण की बहस को फिर से सुर्खियों में ले आता है। हाल ही में, कोटा विस्तार, पिछड़े वर्गों के उप-वर्गीकरण और राष्ट्रीय जनगणना में जातिगत गणना को शामिल करने की मांग पर एक नए विवाद ने आरक्षण नीति पर चर्चा शुरू कर दी है। इसके दो पक्ष हैं, एक का कहना है कि सदियों के संरचित भेदभाव के लिए जाति आधारित आरक्षण ही एकमात्र सार्थक सुधार है, लेकिन दूसरों का मानना है कि इस नीति ने अपना उद्देश्य पूरा कर लिया है या यह शुरू से ही त्रुटिपूर्ण थी और इसे पूरी तरह से आर्थिक आधार पर बदल दिया जाना चाहिए। दोनों पक्ष वास्तविक साक्ष्यों के आधार पर तर्क दे रहे हैं, और यही बात इस बहस को इतना स्थायी बनाती है। यह तथ्य कि आरक्षण ने ऐतिहासिक रूप से उत्पीड़ित समुदायों के बीच एक पेशेवर और राजनीतिक वर्ग तैयार किया है, निर्विवाद है। और समान रूप से बड़ी संख्या में लोगों को लगता है कि लाभ उन लोगों तक नहीं पहुंचे हैं जिन्हें उनकी सबसे अधिक आवश्यकता है, जबकि अन्य को लगता है कि उनकी अपनी आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद उन्हें अनुचित रूप से प्रणाली से बाहर कर दिया गया है।

यह समझने के लिए कि यह तर्क समाप्त होने से इंकार क्यों करता है, वहां वापस जाना आवश्यक है जहां से यह शुरू हुआ था। यह पत्र तीन परस्पर संबंधित प्रश्नों को संबोधित करने का प्रयास करता है। पहला, स्वतंत्रता से पहले और बाद में, आरक्षण नीति का वर्तमान ढांचा कैसे विकसित हुआ? दूसरा, नीति के शुरुआती

समर्थकों और आलोचकों द्वारा तर्क की मुख्य रेखाएं क्या थीं और बाद के कानूनी और राजनीतिक घटनाक्रमों द्वारा इस विमर्श को कैसे नया आकार दिया गया है? तीसरा, वर्तमान बहस विशेष रूप से आरक्षण के प्राथमिक मानदंड के रूप में जाति को आर्थिक स्थिति से बदलने का प्रस्ताव, भारत की सामाजिक नीति में अनसुलझे तनावों के बारे में क्या प्रकट करती है? यह पत्र तर्क देता है कि इस बहस का निर्णय तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि पहले यह स्पष्ट न कर लिया जाए कि जाति आधारित प्रतिकूलता को आर्थिक प्रतिकूलता तक सीमित माना जा सकता है या नहीं, या यह बहिष्कार की एक विश्लेषणात्मक रूप से भिन्न धुरी का निर्माण करती है।

आरक्षण नीति की सैद्धांतिक नींव—

2.1 भारत में जाति आधारित भेदभाव—

भारत में जाति आधारित आरक्षण पर विद्वतापूर्ण साहित्य व्यापक है और काफी अनुशासनात्मक तथा वैचारिक विविधता को दर्शाता है। भारतीय कानून में प्रतिपूरक भेदभाव का गैलेन्टर (1984) का मौलिक अध्ययन आरक्षण के कानूनी ढांचे के सबसे व्यापक उपचारों में से एक बना हुआ है, जो औपनिवेशिक युग के प्रावधानों से लेकर गणराज्य के शुरुआती दशकों तक इसके विकास को रेखांकित करता है। गैलेन्टर का केंद्रीय तर्क कृ कि आरक्षण औपचारिक समानता से एक सीमित विचलन के रूप में कार्य करता है न कि उसके पूर्ण पुनर्गठन के रूप में—वर्तमान अध्ययन सहित बाद के सैद्धांतिक विश्लेषणों को सूचित करना जारी रखता है। जाति आधारित सामाजिक संबंधों के क्षममान पर गुरु (2009) का काम जातिगत प्रतिकूलता का एक घटनात्मक रूप से समृद्ध विवरण प्रदान करता है जो होनेथ के अनादर के सिद्धांत के साथ निकटता से मेल खाता है, भले ही यह स्पष्ट रूप से पहचान—सैद्धांतिक शब्दावली का आह्वान न करता हो। इसी तरह, अंबेडकर के राजनीतिक विचारों पर विद्वता कृ जिसमें रोगिंस (2002) और जाफरलोत (2005) शामिल हैं— ने अंबेडकर के आरक्षण के औचित्य में गरिमा, आत्म—सम्मान और सार्वजनिक स्थिति की केंद्रीयता पर तेजी से जोर दिया है, जो पश्चिमी पहचान—सैद्धांतिक साहित्य से कई दशक पहले के विचारों का अनुमान लगाती है। अंबेडकर का अपना मौलिक पाठ, एनीहिलेशन ऑफ कास्ट (1936), सबसे प्रभावशाली एकल सैद्धांतिक विवरण बना हुआ है, जो जाति को क्रमिक असमानता की एक प्रणाली के रूप में चित्रित करता है जो इसे अधिकांश पश्चिमी भेदभाव—विरोधी सिद्धांतों द्वारा संबोधित सामाजिक स्तरीकरण के अधिक द्विआधारी रूपों से मौलिक रूप से अलग करता है।

2.2 सकारात्मक कार्यवाई—

व्यापक रूप से सकारात्मक कार्यवाई सिद्धांत पर, तुलनात्मक साहित्य कई प्रभावशाली ढांचे प्रदान करता है। प्रतिपूरक न्याय के विवरण, बॉक्सल (1992) सहित दार्शनिकों से जुड़े, किसी समूह पर किए गए पहचानयोग्य अतीत के अन्यायों के निवारण के रूप में अधिमान्य उपचार का औचित्य सिद्ध करते हैं। वितरणात्मक न्याय के विवरण, न्याय के रॉल्लिसन सिद्धांतों (रॉल्ल्स, 1971) से सूचित, किसी भी विशिष्ट ऐतिहासिक अन्याय से स्वतंत्र, समाज भर में अवसर और प्राथमिक सामाजिक वस्तुओं के निष्पक्ष वितरण के संदर्भ में ऐसी नीतियों का औचित्य सिद्ध करते हैं।

राजनीतिक जागरूकता: आरक्षण नीति का ऐतिहासिक विकास

स्वतंत्रता पूर्व घटनाक्रम—

भारत में जाति आधारित आरक्षण की अवधारणा को सबसे पहले 1882 में समाज सुधारक ज्योतिराव फुले ने विलियम हंटर के साथ मिलकर संकल्पित किया था, जब उन्होंने शिक्षा आयोग को एक याचिका सौंपी थी। कोल्हापुर की रियासत के महाराजा, राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज को आधुनिक भारत में आरक्षण प्रणाली का जनक व्यापक रूप से माना जाता है। 26 जुलाई 1902 को, उन्होंने राज्य सरकार की सेवाओं में पिछड़े और दबे हुए वर्गों के लिए 50% आरक्षण प्रदान करने वाला एक ऐतिहासिक आदेश जारी किया। मद्रास प्रेसीडेंसी में, जस्टिस पार्टी द्वारा निरंतर वकालत का अंत 1921 के सांप्रदायिक सरकारी आदेश में हुआ, जिसने लोक सेवक भर्ती में सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व को औपचारिक रूप दिया। दबे हुए वर्गों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल के विरोध में गांधी के उपवास के बाद अंबेडकर और गांधी के बीच बातचीत के जरिए 1932 के पूना पैक्ट ने पृथक रूप से निर्वाचित सीटों के विपरीत आरक्षित सीटों के सिद्धांत को स्थापित किया।

संविधान सभा—

डॉ. बी. आर. अंबेडकर ने अनुच्छेद 16 पर बहस के दौरान संविधान सभा के अपने भाषण में कहा कि अवसर की समानता के मौलिक अधिकार को बनाए रखने के लिए, आरक्षण हमेशा अल्पसंख्यकों की सीटों तक ही सीमित होना चाहिए। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि उचित आरक्षण समानता के नियम का अपवाद नहीं थे, बल्कि यह सुनिश्चित करने का एक तरीका था कि प्रशासनिक सत्ता से बाहर रखे गए लोग वास्तव में प्रतिनिधित्व प्राप्त कर सकें। उन्होंने आगाह किया कि यदि आरक्षण अधिकांश पदों पर कब्जा कर लेता है, तो यह अन्य सभी नागरिकों के लिए समान अवसर के सिद्धांत को प्रभावी रूप से नष्ट कर देगा।

स्वतंत्रता के बाद—

प्रावधानों का वह समूह जो आज आरक्षण की कानूनी रीढ़ बना हुआ है— अनुच्छेद 15(4) और 16(4), जो राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने की अनुमति देते हैं, और अनुच्छेद 330 और 332, जो संसद और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटें आरक्षित करते हैं। एससी और एसटी के लिए आरक्षण मूल रूप से एक अस्थायी उपाय के रूप में कल्पना की गई थी, जिसकी समीक्षा दस वर्षों के बाद की जानी थी यह एक ऐसी अवधि है जिसे तब से हर दशक में संवैधानिक संशोधन द्वारा बढ़ाया गया है।

स्वतंत्रता के बाद, आरक्षण काफी हद तक केवल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति पर लागू किया गया था, लेकिन द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग (मंडल आयोग) 1979 ने केंद्र सरकार की नौकरियों और शैक्षणिक संस्थानों में अन्य पिछड़े वर्गों (ओबीसी) के लिए 27% आरक्षण की सिफारिश करके इसे बदल दिया, जिसे 1990 में लागू किया गया था। इसके परिणामस्वरूप हुई मुकदमेबाजी का अंत सर्वोच्च न्यायालय के इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ (1992) के फैसले में हुआ, जिसने कुल आरक्षण पर 50% की सीमा लगाते हुए और पिछड़े वर्गों के भीतर अपेक्षाकृत सक्षम व्यक्तियों को बाहर करने के लिए क्रीमी लेयर के सिद्धांत को पेश करते हुए ओबीसी आरक्षण को बरकरार रखा।

जाति आधारित मॉडल से एक महत्वपूर्ण विचलन में, 103वें संशोधन (2019) ने मौजूदा एससी, एसटी या ओबीसी कोटा द्वारा कवर नहीं किए गए लोगों के बीच ईडब्ल्यूएस के लिए 10% आरक्षण पेश किया। यह पहली बार था जब भारत में मुख्य रूप से आर्थिक आधार पर आरक्षण का विस्तार किया गया था। 2022 के जनहित अभियान बनाम भारत संघ मामले में, 5 जजों की संविधान पीठ ने 3-2 के बहुमत से माना कि 10% ईडब्ल्यूएस कोटा और पारंपरिक 50% की सीमा का उल्लंघन संवैधानिक रूप से वैध था।

आरक्षण पर विभिन्न विचार

आरक्षण नीति के समर्थक

बी. आर. अंबेडकर भारत के आरक्षण ढांचे के पीछे सबसे महत्वपूर्ण बौद्धिक व्यक्तित्व बने हुए हैं, हालांकि उनकी अपनी स्थिति अक्सर मानी जाने वाली स्थिति से अधिक परतदार थी। उन्होंने आरक्षण को दान के रूप में नहीं बल्कि उन समुदायों के पर्याप्त प्रतिनिधित्व के एक तंत्र के रूप में देखा जिन्हें राज्य की मशीनरी से व्यवस्थित रूप से बाहर रखा गया था। महत्वपूर्ण रूप से, अंबेडकर ने आरक्षण को एक स्थायी या सर्वव्यापी समाधान के रूप में व्यवहार किए जाने के खिलाफ भी चेतावनी दी थी; उनका मानना था कि दबे हुए समुदायों के लिए राजनीतिक और सामाजिक शक्ति आरक्षित नौकरियों जितनी ही, यदि अधिक नहीं तो, मायने रखती है। 19वीं सदी के समाज सुधारक ज्योतिराव फुले ने अधिकांश बौद्धिक आधार तैयार किया जिस पर बाद के विचारकों ने निर्माण किया। उन्होंने तर्क दिया कि ब्राह्मणवादी सामाजिक व्यवस्था ने जानबूझकर निचली जातियों को शिक्षा से दूर रखा, और उत्पीड़ितों के लिए सामूहिक शिक्षा मुक्ति का सबसे शक्तिशाली साधन थी एक ऐसी स्थिति जिसने बाद में सीधे स्कूलों और कॉलेजों में आरक्षित सीटों की मांगों को जन्म दिया। तमिल क्षेत्र में आत्म-सम्मान आंदोलन के शीर्ष व्यक्तित्व पेरियार ई. वी. रामासामी ने इस तर्क को आगे बढ़ाया, आरक्षण को न केवल मुआवजे के रूप में बल्कि ऐतिहासिक रूप से प्रभावशाली अल्पसंख्यक से दूर राजनीतिक और प्रशासनिक शक्ति के पुनर्संतुलन के रूप में तैयार किया। काका कालेलकर, जिन्होंने 1953 में प्रथम पिछड़ा वर्ग आयोग की अध्यक्षता की थी, ने अधिक सतर्क रुख अपनाया; बाद में उन्होंने पिछड़ेपन के लिए जाति को एकमात्र मानदंड के रूप में इस्तेमाल किए जाने के बारे में आरक्षण (शाब्दिक अर्थ में संकोच) व्यक्त किया, जो आज भी जारी बहसों को पूर्वाभासित करता है।

आलोचक और उनके विचार—

जाति आधारित आरक्षण का विरोध कई अलग-अलग दिशाओं से आया है, जो सभी वैचारिक रूप से एक दूसरे के साथ संरेखित नहीं हैं। कुछ आलोचकों, जिनमें खुद संविधान सभा की बहसों के दौरान कुछ संवैधानिक निर्माता भी शामिल थे, को चिंता थी कि जाति पर आधारित आरक्षण उसी जाति चेतना को मजबूत कर सकता है जिसे भंग करने का इसका उद्देश्य था, कि लाभों के लिए लोगों को आधिकारिक रूप से पहचानकर और वर्गीकृत करके, राज्य अनजाने में जाति पहचान को मिटाने के बजाय उसे लंबा खींच देगा। आलोचना की एक अलग धारा, जो आर्थिक रूप से उदार और योग्यता-आधारित तर्कों से जुड़ी है, का तर्क है कि उच्च शिक्षा और सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण व्यक्तिगत योग्यता पर समूह पहचान को प्राथमिकता देकर दक्षता और गुणवत्ता से समझौता करता है। आलोचना की इस पंक्ति ने 1990 के मंडल आंदोलन के दौरान विशेष दृश्यता हासिल की, जब छात्र समूहों ने तर्क दिया कि जाति ऐसे देश में आवश्यकता को मापने के लिए बहुत ही एकतरफा साधन है जहां आर्थिक स्थितियां एक ही जाति समूह के भीतर भी अत्यधिक भिन्न होती हैं। एक तीसरी धारा, जो अक्सर स्वयं पिछड़े वर्गों के भीतर के वर्गों द्वारा व्यक्त की जाती है, का तर्क है कि आरक्षण का लाभ असमान रूप से फ्रीमी लेयर या पिछड़े वर्गों के अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति वाले सदस्यों को मिला है, जबकि उन्हीं समुदायों के भीतर सबसे गरीब लोग दशकों की नीति के बावजूद काफी हद तक अछूते रहे हैं। इस आंतरिक आलोचना ने उप-वर्गीकरण की मांगों को बढ़ावा दिया है, ताकि पिछड़े वर्गों के बीच सबसे वंचितों को उसी व्यापक श्रेणी के बेहतर स्थिति वाले सदस्यों द्वारा लगातार प्रतिस्पर्धा से बाहर न किया जाए।

जारी बहस—

आज भारत में आरक्षण कानून, राजनीति और जीवंत अनुभवों के चौराहे पर स्थित है और बहस काफी विकसित हुई है।

इस पर विभिन्न विचार—

एससी, एसटी या ओबीसी से ताल्लुक रखने वाले लोगों के लिए आरक्षण केवल एक ऐतिहासिक अवशेष नहीं बल्कि एक ढाल है। आवास और विवाह तक पहुंच में जाति आधारित भेदभाव के प्रमाण हैं, यह तर्क देते हुए कि सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव नहीं आया है और अब आरक्षण हटाने से बस उन समुदायों को लाभ वापस मिल जाएगा जिन्होंने इसे कभी नहीं खोया था। दूसरों के लिए, आरक्षण को वर्तमान समय की आर्थिक वास्तविकता से अलग, 1950 के दशक की वास्तविकता में जमी हुई नीति के रूप में देखा जाता है, जो तब से भारत की अर्थव्यवस्था और सामाजिक गतिशीलता में बदलावों का हिसाब देने में असमर्थ है। एक तीसरा दृष्टिकोण है जिसका मानना है कि बहस को जारी रखने या समाप्त करने के बीच द्विआधारी के रूप में नहीं बनाया जाना चाहिए, बल्कि इस सवाल के रूप में देखा जाना चाहिए कि आवधिक समीक्षा, बेहतर डेटा संग्रह और उप-वर्गीकरण के माध्यम से आरक्षण को कैसे पुनर्गठित किया जाना चाहिए।

क्या आरक्षण को उसके वर्तमान स्वरूप में जारी रहना चाहिए?

आलोचक बताते हैं कि आरक्षण की समय-समय पर समीक्षा की जानी थी, न कि डिफॉल्ट रूप से अनिश्चित काल के लिए बढ़ाया जाना था, और तर्क दिया कि देश में बहुत बदलाव आया है, इसलिए उत्पीड़ित समुदायों की सुरक्षा के मूल औचित्य की स्वचालित नवीनीकरण के बजाय फिर से जांच की आवश्यकता है। कुछ लोगों ने आरक्षण को आर्थिक आधार पर स्थानांतरित करने का प्रस्ताव दिया है। उन्होंने तर्क दिया कि गरीबी और अभाव जाति की सीमाओं से परे हैं, और एक पूरी तरह से आर्थिक मानदंड अधिक न्यायसंगत होगा क्योंकि इसमें सभी समुदायों के गरीब व्यक्ति शामिल होंगे।

जो लोग इस बदलाव का विरोध करते हैं वे तर्क देते हैं कि यह मौलिक रूप से गलत समझता है कि आरक्षण को किस समस्या को संबोधित करने के लिए डिजाइन किया गया था। जाति आधारित भेदभाव, वे तर्क देते हैं, केवल गरीबी का एक पर्याय नहीं है ऐतिहासिक रूप से उत्पीड़ित जाति का एक धनी व्यक्ति अभी भी पूरी तरह से जाति पहचान के कारण सामाजिक बहिष्कार, अपमान या हिंसा का सामना कर सकता है, ऐसे तरीकों से जो ऐतिहासिक रूप से प्रभावशाली जाति का एक गरीब व्यक्ति आमतौर पर नहीं करता है। इस विचार में, आरक्षण को पूरी तरह से आर्थिक मानदंड में समेटना आय असमानता को तो संबोधित करेगा, लेकिन जाति आधारित भेदभाव के विशिष्ट, गैर-आर्थिक आयामों को पूरी तरह से असंबोधित छोड़ देगा। यह असहमति कृ कि क्या

जातिगत प्रतिकूलता को आर्थिक प्रतिकूलता तक सीमित माना जा सकता है कृ समकालीन बहस के मूल में स्थित है, और समझदार, अच्छी तरह से सूचित लोग इस पर तीव्रता से असहमत होना जारी रखते हैं।

आगे का रास्ता—

इस बहस में कोई भी रुख अपनाया जाए, कई विश्लेषकों, नीति निर्माताओं और टिप्पणीकारों के बीच आगे के कुछ व्यावहारिक दिशा-निर्देशों पर व्यापक सहमति है। सबसे लगातार उठाई जाने वाली सिफारिशों में से एक जाति, आय और सामाजिक संकेतकों पर अद्यतन, विस्तृत डेटा की आवश्यकता है। वर्तमान आरक्षण ढांचे का अधिकांश हिस्सा अभी भी उन धारणाओं और आंकड़ों पर टिका है जो दशकों पुराने हैं। एक अधिक सटीक, समय-समय पर अद्यतन की जाने वाली जाति जनगणना, जो वर्तमान में उपलब्ध सामाजिक-आर्थिक जाति जनगणना डेटा से परे हो कृ नीति को अत्यधिक विविध श्रेणियों में समान रूप से लागू करने के बजाय अधिक सटीक रूप से लक्षित करने की अनुमति देगी।

आरक्षित श्रेणियों के भीतर उप-वर्गीकरण। न्यायपालिका के वर्गों सहित, ओबीसी और यहां तक कि एससी जैसी व्यापक श्रेणियों को उनके पिछड़ेपन के वास्तविक स्तर के आधार पर उप-समूहों में विभाजित करने के लिए समर्थन बढ़ रहा है, ताकि आरक्षित श्रेणी के भीतर सबसे वंचित समुदायों को उसी श्रेणी के अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति वाले समुदायों द्वारा लगातार बाहर न किया जाए। यह इस आंतरिक आलोचना को संबोधित करता है कि आरक्षण के लाभ कथित लाभार्थियों के बीच भी असमान रूप से वितरित किए गए हैं। क्रीमी लेयर सिद्धांत को मजबूत करना और आवधिक समीक्षा। यह सुनिश्चित करना कि आरक्षण के लाभ उन लोगों की ओर निर्देशित हों जिन्हें वास्तव में उनकी आवश्यकता है बजाय इसके कि आरक्षित श्रेणी के भीतर पहले से ही लाभान्वित परिवारों द्वारा बार-बार कब्जा कर लिया जाए नीति की निरंतर वैधता के लिए व्यापक रूप से आवश्यक माना जाता है। कौन लाभ उठा रहा है, और कितना, इसकी नियमित, पारदर्शी समीक्षा आरक्षण को समुदायों के बीच जनता का विश्वास बनाए रखने में मदद करेगी।

न केवल कोटा के माध्यम से, बल्कि सीधे जाति आधारित भेदभाव से निपटना। कई सिफारिशें इस बात पर सहमत हैं कि केवल आरक्षण ही जाति आधारित सामाजिक भेदभाव को खत्म नहीं कर सकता कृ छुआछूत, अंतर्विवाह लागू करने और जाति आधारित हिंसा जैसी प्रथाओं के लिए रोजगार या प्रवेश कोटा से स्वतंत्र, समर्पित कानूनी प्रवर्तन, सामाजिक जागरूकता अभियानों और शैक्षिक सुधार की आवश्यकता होती है। जाति आधारित भेदभाव को समाप्त करने के लिए एक साथ कई मोर्चों पर कार्रवाई की आवश्यकता के रूप में वर्णित किया गया हैरू मौजूदा भेदभाव-विरोधी कानून का कड़ा प्रवर्तन, हाशिए पर रहने वाले बच्चों के लिए शुरुआती शिक्षा में निरंतर निवेश, और सामाजिक पहल जो केवल परिणामों के बजाय दृष्टिकोणों को संबोधित करती हैं। श्रेणी की परवाह किए बिना वास्तव में हाशिए पर पड़े वर्गों को सहायता का विस्तार करना। वैचारिक रूप से भिन्न टिप्पणीकारों द्वारा दोहराई गई एक आवर्ती सिफारिश यह है कि ऐतिहासिक रूप से आरक्षण से जुड़े लाभ-गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुंच, कौशल विकास, और प्रवेश स्तर के अवसर कृ हाशिए की पृष्ठभूमि वाले लोगों तक व्यापक रूप से पहुंचने चाहिए, जिसमें साधन-परीक्षित छात्रवृत्तियों, ब्रिज कार्यक्रमों और आउटरीच के माध्यम से जो केवल जाति प्रमाण पत्र पर निर्भर नहीं करता है। इसे जाति आधारित आरक्षण के प्रतिस्थापन के रूप में कम और एक पूरक परत के रूप में अधिक प्रस्तुत किया गया है, जो उन लोगों को संभालने के लिए डिजाइन किया गया है जो मौजूदा प्रणाली की दरारों से गिर जाते हैं, चाहे वे जाति रेखा के किसी भी तरफ हों।

निष्कर्ष—

इस पत्र ने तर्क दिया है कि भारत की आरक्षण नीति को केवल दुर्लभ सार्वजनिक वस्तुओं को आवंटित करने के लिए एक वितरणात्मक तंत्र के रूप में नहीं, बल्कि पुनर्वितरण और मान्यता दोनों के एक द्विआधारी साधन के रूप में सबसे अच्छी तरह से समझा जाता है, जो ऐतिहासिक जाति आधारित अन्याय के भौतिक और विशिष्ट रूप से गरिमापूर्ण आयामों को एक साथ संबोधित करता है। गैलेन्टर, जाफरलोत, होनेथ, रॉल्स के सैद्धांतिक ढांचे पर निर्माण करते हुए और खुद अंबेडकर के विचारों को स्थापित करते हुए, इस पत्र ने दिखाया है कि किसके द्वारा और कैसे शुरू होने से लेकर विवादित नीतिगत प्रश्न पर कई दृष्टिकोणों के साथ इस पर चल रहे विवाद तक आरक्षण समय के साथ कैसे विकसित हुआ।

Author's Declaration

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this

article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

संदर्भ—

1. अंबेडकर, बी.आर. (1936) एनीहिलेशन ऑफ कास्ट
2. देशपांडे, ए. (2013) अफ़र्मेटिव एक्शन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
3. गैलेन्टर, एम. (1984) कम्पेटिंग इक्वेलिटीज, लॉ एंड द बैकवर्डनेस इन इंडिया. यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस
4. गुरु, जी. (संपादक) (2019) ह्यूमिलेशन, क्लेम्स एंड कॉन्टेक्ट. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
5. इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ, एआईआर 1993 एससी 477
6. जनहित अभियान बनाम भारत संघ, 2022 ऑनलाइन एससी 1540
7. जाफरलोत, सी. (2005) डॉ. अंबेडकर एंड अनटचेबिलिटी, एनालाइजिंग एंड फाइटिंग कास्ट. परमानेंट ब्लैक
8. रॉल्स, जे. (1971) थ्योरी ऑफ जस्टिस।

Cite this Article

"अविशा रवि", "भारत में जाति आधारित आरक्षण: एक राष्ट्र जो अभी भी अपने उत्तर पर बहस कर रहा है", ResearchNext International Multidisciplinary Journal (RPIMJ), ISSN: 3107-9725 (Online), Volume:2, Issue:3, July-September 2026.

“Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under Creative Commons Attribution 4.0 (CC-BY), allowing others to use, share, modify, and distribute it with proper credit to the author.”